SHODH SAMAGAM

ISSN : 2581-6918 (Online), 2582-1792 (PRINT)

स्त्री के दमन के विरुद्ध खड़ी अप्रतिम रचनाकारः मैत्रेयी पुष्पा

प्रतिभा कुमारी, शोधार्थी, हिंदी विभाग
विनोबा भावे विश्वविद्यालय, हजारीबाग, झारखण्ड, भारत

ORIGINAL ARTICLE

Author
प्रतिभा कुमारी, शोधार्थी

shodhsamagam1@gmail.com

Received on : 15/03/2024
Revised on : -----
Accepted on : 16/05/2024
Overall Similarity : 02% on 08/05/2024

शोध सार

हिन्दी में स्त्री–दृष्टि को लेकर स्वातंत्र्योत्तर हिन्दी कथा साहित्य में जिन लेखिकाओं ने पाठकों का ध्यान स्त्री के कठोर और कटु जीवन यथार्थ की ओर आकृष्ट किया उनमें मैत्रेयी पुष्पा सबसे चर्चित और सबसे विवादास्पद लेखिका हैं। समकालीन आलोचना में पाठ की केन्द्रीयता को जितना महत्त्व दिया गया है, उससे एक बात गौण हो गई कि किसी लेखक या कवि का सामाजिक–राजनीतिक संघर्ष उसके आत्मसंघर्ष को प्रभावित करता है और इस प्रकार लेखक या कवि का आत्मसंघर्ष उसकी रचनात्मक चेतना के निर्माण में किसी न किसी रूप में भूमिका अवश्य निभाता है। पाठ केन्द्रित आलोचना में रचनाकार का आत्मसंघर्ष गौण हो जाता है जिसके कारण उसके रचनात्मक संघर्ष की जमीन को समझना कठिन हो जाता है। मैत्रेयी पुष्पा के कथा साहित्य को लेकर जितने तरह के विवाद हुए हैं, उनके पीछे एक बड़ा कारण यह है कि मैत्रेयी ने अपनी माँ को जिस प्रकार के संघर्षों से गुजरते देखा और स्वयं भी बचपन से जिस प्रकार के संघर्षों का सामना किया, उनके लेखन पर इन सबका प्रभाव पड़ना स्वाभाविक था। इस आलेख को उन्हीं स्थितियों और उनके बीच कथाकार के रूप में मैत्रेयी पुष्पा के उभरने की विवेचना की गई है।

मुख्य शब्द

स्त्री–दृष्टि, समकालीन, आलोचना, आत्मसंघर्ष, संवेदना, नैतिकता.

प्रस्तावना

मैत्रेयी पुष्पा आम स्त्रीवादी लेखिकाओं से इस मायने में भिन्न हैं कि इन्होंने मध्यवर्गीय यौनिकता की रूढ़ियों से अलग हटकर ग्रामीण किसानों एवं वंचित, दमित वर्ग की स्त्रियों के जीवन यथार्थ को व्यापक सामाजिक, आर्थिक और राजनीतिक परिदृश्य में रखकर

देखा है और उनके खुले विवरण प्रस्तुत किये हैं। इन तमाम संघर्षों के बीच दमित यौन कुंठाओं के वर्णन भी उन्होंने किये जरुर हैं पर इनके केन्द्र में भी वे परिस्थितियां हैं जिनके बीच स्त्री की चेतना का निर्माण होता है यानि स्त्री के संघर्षों को उसकी देह के विमर्श में सीमित रहकर देखने के बजाय उसकी वर्गीय स्थिति और वर्ण की सीमा में भी देखा है। एक विशिष्ट जैविक प्रभेद के रूप में ही स्त्री को न देखकर मैत्रेयी ने उसको पूरी सामाजिकता के परिप्रेक्ष्य में देखा। सुनीता कुमारी का कहना है– "मैत्रेयी पुष्पा एक प्रतिभा सम्पन्न नारी लेखिका रही है, इनके उपन्यासों ने नारी संवेदना और यथार्थ की दिशा में महत्त्वपूर्ण आयाम खोले हैं। पुष्पा जी के उपन्यासों को पढ़ने के बाद हम पाते हैं कि उनके उपन्यासों की समस्त नारियां चेतना सम्पन्न और साहसी हैं जो पारंपरिक नैतिकता के व्यवहार को एक सिरे से खारिज कर बुनियादी परिवर्तन को संकेत देती है।"[1]

इनका वास्तविक नाम मैत्रेयी ही है। यह नाम उनके पिता ने रखा लेकिन गाँववालों को मैत्रेयी उच्चारण में असुविधा थी तो उन्होंने पुष्पा कहना प्रारम्भ किया। आगे मैत्रेयी जी ने दोनों नाम जोड़कर मैत्रेयी पुष्पा नाम से लिखना प्रारम्भ किया। घर में उनको लाली नाम से पुकारा जाता था। मैत्रेयी वैदिक काल की एक विदुषी स्त्री थी, उसी तर्ज पर उनके पिता ने यह नाम रखा था। मैत्रेयी नाम रखते वक्त पंडित जी ने कहा था कि यह ज्ञानवान बनेगी, जैसे ऋषि याज्ञवल्क्य की पत्नी मैत्रेयी थी। उसने अपने ऋषि पति से कोई सम्पदा नहीं माँगी, कोई सुख नहीं चाहा, बस ज्ञान माँगा था।

कस्तूरी ने मैत्रेयी जी को अलीगढ़ में पढ़ाई के लिए समाज कल्याण बोर्ड की संयोजिका के घर रहने का प्रबंध किया। कस्तूरी बेटी के रहने के बदले संयोजिका को एक मन गेहूँ और बीस रुपये प्रतिमाह देती थी लेकिन फिर भी मैत्रेयी को भूखा रखा जाता, गन्दे कपड़ों में रखा जाता। मैत्रेयी को यहाँ कई प्रकार की तकलीफ सहनी पड़ी। मैत्रेयी अपनी माँ को पत्र में कहती है कि यहाँ एक आदमी है। वह इस घर का सबसे छोटा बेटा है, और उसका ब्याह हो गया है, वह अपनी पत्नी की उपेक्षा करके वह मुझे परेशान करता है। इस तरह की स्थितियां स्त्री के जीवन में आम हैं। मैत्रेयी ने इन सबका खुलकर वर्णन किया है। संतोष पवार कहते हैं कि "लेखिका ने स्त्री शोषण के एक–एक पहलू को चुन–चुनकर ऐसे रखा है कि लगता ही नहीं कि वह सिर्फ नारियों की वकालत कर रही है। नारी के साथ घटी हर घटना उसके लिए किस तरह अभिशाप सिद्ध होती है, यह मैत्रेयी दिखाती चलती है। पिछड़ी जाति में विधवा विवाह मंजूर है परंतु वह भी उसके लिए वरदा न नहीं, अभिशाप सिद्ध होता है। गर्भपात हो या विधवा विवाह या तलाक हो, नारी को सुख–सुविधा देने के बजाय यातना के ही नये द्वार खोलता है। विधवा विवाह के नाम पर नारी का विक्रय होता है। हमारा समाज दोमुँहा है। नारी एक वस्तु के रूप में खरीदी या बेची जाती है।"[2]

मैत्रेयी ने अपनी माँ को चिट्ठी लिखकर सारी बातें बतलाई कि किस तरह वह आदमी उसको वासना की दृष्टि से देखता है, किन्तु माँ की ओर से मैत्रेयी को ही उपदेश सुनने पड़े। संयोजिका से कहने का मन था परंतु हिम्मत नहीं हुई क्योंकि वह उससे बोलती ही नहीं थी। सिवा इसके कि लड़की पानी ला, लड़की रोटी ला, लड़की पाँव दबा, लड़की कपड़े धो। इस प्रकार पढ़ाई के लिए मैत्रेयी को भी काफी कष्ट सहने पड़े। जब सहनशक्ति ने जवाब दे दिया तो एक दिन वह समाज कल्याण बोर्ड की संयोजिका के घर से भागकर अपने घर चली गयी। माँ को बहुत दुःख हुआ। माँ का मानना है लड़की को अपने बचाव के रास्ते स्वयं खोजने चाहिए। वे कहती हैं– "जहाँ मैं रहती हूँ वहाँ भी गाँव है। स्कूल दूर है। जरूरी नहीं कि जहाँ मैं रहूँ वहाँ कोई हादसा न हो। अपनी रक्षा इस लड़की को खुद करनी है। बचाव के रास्ते अपने आप खोजने होते हैं। दूसरा कोई कब तक और कहाँ तक बचाएगा?"[3]

वास्तविकता यह है कि समाज के नियम–परिनियम पुरुषों के ही द्वारा बनाए गए हैं और यौन नैतिकता, विवाह, तलाक, विधवाओं को लेकर बंदिशें सब पुरुषों के द्वारा ही तय की गई हैं। यहाँ तक कि खुद स्त्री इसको वैधता प्रदान करने के लिए खड़ी हो जाती है और यौन नैतिकता की सीमाएँ भले ही पुरुष तोड़े, इल्जाम और उसके दुष्परिणाम स्त्री को ही भुगतने पड़ते हैं।

स्त्री तथा पुरुष को भले ही समाज की गाड़ी के दो पहिये कहा जाता है फिर भी स्त्री को समाज में बराबरी का स्थान नहीं दिया जाता है। आज समाज में दहेज भयंकर बीमारी की तरह बढ़ रही है। दहेज लेना लड़के के

पिता का अधिकार तथा दहेज देना लड़कीवालों का कर्तव्य बनता जा रहा है। डॉ. जोगेन्द्र सिंह बिसेन का कहना है कि "मैत्रेयी के विवाह के लिए भी इसी प्रकार से दहेज की माँग की गई, जिसे मैत्रेयी की माँ ने अस्वीकार किया। कई बार माँ को अपमान सहना पड़ा..... ।"[4] कहना जरूरी होगा कि मैत्रेयी की माँ आम स्त्रियों की तरह समझौतावादी नहीं थी।

मैत्रेयी पुष्पा के पति डॉ. रमेशचंद्र शर्मा भारत सरकार के स्वास्थ्य विभाग में ॲडिशनल मैनेजिंग डायरेक्टर के वरिष्ठ पद पर थे लेकिन विवाह के बाद मैत्रेयी का जीवन ठहर सा गया। वैवाहिक जीवन में कई संघर्ष की स्थितियाँ उत्पन्न हुई। आगे की शिक्षा पूरी नहीं हुई। एम.ए. हिन्दी होने के बावजूद पीएच.डी. नहीं कर सकी फिर भी उन्होंने संघर्ष का मार्ग नहीं छोड़ा। स्वीटी यादव का यह कथन द्रष्टव्य है– "आत्मकथा (गुड़िया भीतर गुड़िया) के माध्यम से मैत्रेयी पुष्पा विवाह संबंधी पारंपरिक रूढ़ियों को तोड़ने की पुरजोर कोशिश करती हैं। पति–पत्नी के बीच असमानता की खाई को समाप्त कर समान अधिकार और समान कर्तव्यों के हक के लिए लेखिका समाज पुरुषवादी मानसिकता से लड़ने का साहस भी करती है।..... स्त्री की अपनी स्वयं की पहचान के लिए लेखिका निरंतर संघर्षरत दिखायी देती है। वह उन परंपराओं को चुनौती देती है, जो रीति–रिवाजों और कर्मकांडों के नाम पर स्त्री को आदर्शों के लत्ते से ढँक देना चाहती हैं।"[5]

व्यवस्था के खिलाफ संघर्ष करना मैत्रेयी का स्वभाव है फिर वह सामाजिक–राजनीतिक व्यवस्था हो या पारिवारिक संरचना, सबसे उन्होंने संघर्ष किया। इसके लिए उसने अपने हाथ में कलम थाम ली। कलम के सहारे अपनी चेतना की आत्मा की आवाज को लगातार कथा के रूप में रचती रही है। 'गुड़िया भीतर गुड़िया' के निवेदन में वह लिखती है– "मैंने कलम थाम ली। कलम के सहारे मेरी चेतना, जिसे मैंने आत्मा की आवाज के रूप में पाया, तभी तो साहित्य के द्वार तक चली आई। सुना था साहित्य व्यक्ति के लिए स्वतन्त्रता देता है। हाँ लिखकर ही तो मैंने जाना कि न मैं धर्म के खिलाफ थी, न नैतिकता के विरूद्ध। मैं तो सदियों से चली आ रही तथाकथित सामाजिक व्यवस्था से खुद को मुक्त कर रही थी।"[6] यानि मैत्रेयी व्यवस्था या सामाजिक–पारिवारिक संरचना में स्त्री के रूप में बराबरी का स्पेस चाहती हैं, केवल उनका भंजन नहीं– "अब स्त्री दासी या देवी नहीं है, उसका स्वतंत्र व्यक्तित्व है। आज स्त्री दया, लज्जा, ममता, करुणा आदि गुणों का प्रतीक मात्र न होकर अपना स्वतंत्र अस्तित्व रखती है। वह अपने गौरव को पहचानने लगी है कि वह मात्र भोग्या नहीं है।"[7]

सदियों से नारी जाति पर हो रहे अत्याचार से वह स्वयं को मुक्त कर रही है, नारी जाति को मुक्त कर रही है। मैत्रेयी के व्यक्तित्व में हमें निर्भीकता दिखाई देती है। जीवन में घटित कई घटनाओं में उनकी निर्भीक वृत्ति उभरकर सामने आती है। वह व्यवस्था के खिलाफ संघर्ष करती है, परम्पराओं का दमन करती है। वह नारी जाति के उत्थान के लिए हमेशा लिखती रही है। पत्नी पतिव्रता के नियमों का पालन करे और पति इससे स्वतंत्र व्यवहार करे इन बातों को मैत्रेयी स्वीकार नहीं करती। उनका मानना है– "यदि कोई पति अपनी पत्नी की कोमल भावनाओं को कुचलकर खत्म करता है तो पत्नी को पतिव्रता के नियमों का उल्लंघन हर हालत में करना होगा।"[8]

मैत्रेयी को यह बिल्कुल स्वीकार नहीं है कि पुरुष को गलत कर्म करने की आजादी है। वे स्त्री के लिए यही सोच रखती है। लेकिन वह इस प्रश्न उठाती है कि गलत क्या होता है। उसकी परिभाषा क्या है? जो सदियों से पुरुष ने यानि पितृ सत्ता ने तय कर दिया वही परिभाषा है ? क्या कभी स्त्री से किसी ने पूछा कि यह परिभाषा हम कर रहे हैं तुम्हारे लिये। जब पूछे तो हम बतायेंगे कि स्त्री क्या चाहती है। हमारे जीवन के लिए क्या सही है क्या गलत है। हम स्त्रियों को लेकर पुरुष समाज के दोहरे मानदंड के प्रति उनका रुख कितना कठोर था कि उन्होंने तय किया था कि पहली बेटी के जन्म के पश्चात् अगर मैंने दूसरी भी लड़की को जन्म दिया तो उसका आम्रपाली रखूँगी। आम्रपाली, जिसे इतिहास में वेश्या नाम दिया। लेकिन वह एक स्वतन्त्र औरत थी।.... मुझे आम्रपाली बेटी के रूप में इसलिए चाहिए क्योंकि वह निडर स्त्री थी।

मैत्रेयी पुष्पा ने देर से लिखना शुरू किया। उनका संपर्क राजेन्द्र यादव से हुआ जो 'हंस' का संपादन कर रहे थे। उन्होंने मैत्रेयी को 'हंस' का मंच ही प्रदान नहीं किया बल्कि उनका मार्गदर्शन भी किया इसीलिए वे राजेन्द्र

यादव को अपना साहित्यिक गुरु मानती हैं। दूसरी ओर कथाकार के तौर पर वे फणीश्वरनाथ रेणु को सबसे ज्यादा पसंद करती हैं। रेणु को उन्होंने प्रत्यक्ष रूप से देखा नहीं लेकिन वे स्वयं कहती हैं कि इन्दिरा गाँधी की जब हार हुई और जनता पार्टी सत्ता में आई थी, 1977 का साल था उसी वर्ष फणीश्वरनाथ रेणु की मृत्यु हुई। उनकी अन्तिम क्रिया टी.वी. के पर्दे उन्होंने देखा और रोने लगी थी। दोनों की तस्वीरें मैत्रेयी ने अपने कमरे में लगा रखी है। पति ने कई बार तस्वीरों में से राजेन्द्र यादव की तस्वीर तोड़ी लेकिन जल्द ही फिर मढ़वा ली गई।

मैत्रेयी ने अपनी रचनाओं में स्त्री को प्रमुखता दी। उनकी समस्त रचनाओं की प्रमुख पात्र स्त्री ही है। वह स्त्री की संघर्षशील क्षमता को उजागर कर, दासता से स्त्री को मुक्त करना चाहती है। मैत्रेयी के अनुसार लड़की जब घर से भागती है तो जरूरी नहीं कि वह लड़के के साथ ही भागे वह तो अपने मकसद के साथ भी भागती है। किन्तु समाज इसे समझता नहीं है।

यहाँ उनकी प्रमुख रचनाओं का परिचय यहाँ प्रस्तुत हैं:

'बेतवा बहती रही' उपन्यास 1994 में प्रकाशित हुआ। इसमें विंध्य की पहाड़ियों में बसनेवाले, अभावग्रस्त जन जीवन की कथा है जिसको एक विधवा युवती की व्यथा, वेदना तथा पुनर्निवाह की समस्या को लेकर कथा की रचना की गई है। उर्वशी इस कथा की नायिका है। उसकी सुन्दरता उसके लिए अभिशाप बन जाती है। उसका सगा भाई उसे बेच पैसे कमाना चाहता है परन्तु उसके नाना उसे बचाकर ब्याह करा देते हैं। ब्याह के पश्चात् पति की मृत्यु हो जाती है। इससे भाई को दुख नहीं होता, वह खुश होता है। वह उर्वशी को बरजोरसिंह को बेच देता है। वह बड़ी उम्र का आदमी है जिसकी बेटी मीरा, उर्वशी की सहेली है। अर्थात् पिता की आयु के वृद्ध व्यक्ति से विधवा उर्वशी का पुनर्विवाह होता है। इस प्रकार स्त्री की बेबसी और यातना को उर्वशी की कथा के माध्यम से व्यक्त किया गया है।

इनका दूसरा उपन्यास 'इदन्नम्' है। इसमें उन्होंने विस्थापित मजदूरों की समस्या उठाई है। मंदाकिनी दोहरी लड़ाई लड़ती है, औरत होने की और वंचितों के अधिकारों की। इसकी एक खास बात यह है कि इसमें रामायण पर कई सवाल उठाये गए हैं। महाभारत की नियोग प्रथा पर भी प्रश्न खड़ा किया है जो स्त्री की दासता से संबंधित है। राजनीतिक समस्या को भी उजागर किया गया है। तीन नारियों द्वारा नारी समस्या एवं नारी मानसिकता का चित्रण प्रस्तुत उपन्यास में है।

'चाक' बहुचर्चित उपन्यास है। इसमें मैत्रेयी ने नारी की समस्या और उसकी मुक्ति की आकांक्षा को आधार बनाया है। नायिका सारंग स्त्री के मुक्ति संघर्ष का साक्षात् रूप है। वह जाट समुदाय की पढ़ी–लिखी लड़की है। डोरिया ने उससे बलात्कार की कोशिश की परन्तु सफल नहीं हो सका। उसका बदला लेने के लिए वह कैलासी सिंह जैसे पहलवान को बुलाती है। परन्तु जब उसने जाना कि उसमें पौरूष की कमी है तो उसने कलावती चाची द्वारा उसकी शक्ति को जगाने की कोशिश की और कैलासी सिंह ने कुश्ती से डोरिया को हरा दिया। इस प्रकार वह अपने अपमान का बदला लेती है।

कहने की जरूरत नहीं कि इस उपन्यास ने यौन नैतिकता के निर्धारित मानदंडों के विरुद्ध जाकर खलबली मचा दी। जाट जैसे बंद समुदाय के घर की कथा रचकर उन्होंने स्त्री की यौन भावना का जिस प्रकार विद्रोही स्वरूप प्रस्तुत किया, स्त्री को लेकर बड़े–बड़े क्रांतिकारी विचारों वाले लोगों को झकझोर कर रख दिया। बहरहाल यह उपन्यास बहुत चर्चित हुआ।

इसी दौरान श्रीधर नामक मास्टर गाँव के स्कूल में आता है। उससे वह प्यार कर बैठी। करवाचौथ के दिन भी उसकी आँखों के सामने पति का नहीं श्रीधर का चेहरा आता है। इस प्रकार उपन्यास की नायिका सारंग ने इस उपन्यास में पुरुष सत्ता को ललकारा है और यह कहने का प्रयास किया है कि स्त्री अपनी देह का किस प्रकार उपयोग करती यह उसकी इच्छा पर निर्भर करता है यानि वे स्त्री देह की स्वायत्तता का वे समर्थन करती हैं।

'झूला नट' उपन्यास 1999 में प्रकाशित हुआ। इस उपन्यास में परित्यक्ता स्त्री की सन्निहित शक्ति को दिखलाया गया है। नायिका का बचपन में रिश्ता तय होता है किन्तु सुमेर उसे नहीं ले जाता वह रखैल रख लेता

है। पति को वश में करने के सारे उपाय वह करती है। अंत में सास उस पर दया कर उससे पाँच साल छोटे देवर को सौंप देती है। पति ने रखैल रख ली तो किसी को कुछ नहीं कहा फिर उसने रखैला रख लिया तो क्यों भला बुरा कहा जाता है? बालकिशन उसका रखैला है। इसके साथ ही सेक्स का खुलकर वर्णन किया है। उपन्यास छोटा होकर भी अप्रितम है।

2000 में प्रकाशित उपन्यास 'अल्मा कबूतरी' के माध्यम से मैत्रेयी ने कबूतरा जनजाति के ऐतिहासिक तथा समाज शास्त्रीय विश्लेषण का प्रयास किया। इसकी कथा के केंद्र में दो स्त्रियां हैं– 'कदम बाई' और 'अल्मा'। ये बुन्देलखण्ड की विलुप्त होती कबूतरा जाति का प्रतिनिधित्व करती हैं।

उपन्यास की आधी कथा अल्मा के इर्द–गिर्द घूमती है। अल्मा और राणा के बीच पनपते रागात्मक सम्बन्ध भी उपन्यास में महत्वपूर्ण हैं। कबूतरा जाति के अपराधों को उजागर करते हुए उसका समाजशास्त्री विश्लेषण करने का प्रयास किया है। आजादी के बाद भी यदि देश में इस प्रकार की स्थिति है तो इसका जिम्मेदार किसे माना जाय, यह इस उपन्यास में दर्शाया गया है।

2001 में प्रकाशित 'अगनपाखी' नामक उपन्यास में सामंती परिवारों में व्याप्त सती प्रथा पर प्रहार किया है। इस उपन्यास की नायिका भुवन कम पढ़ी–लिखी, किन्तु परम्परा और मान्यताओं की दिशा बदलने वाली है। भुवन की शादी पागल के साथ होती है। वह नपुंसक व्यक्ति है। नियोग पद्धति से पुरोहित द्वारा बलात्कार का प्रयास किया जाता है।

निष्कर्ष

उपर्युक्त विवेचन से यह विदित होता है कि मैत्रेयी पुष्पा के लेखकीय व्यक्तित्व और उनकी सामाजिक–राजनीतिक एवं सांस्कृतिक चेतना का निर्माण किन परिस्थितियों के बीच हुआ। स्त्री को लेकर जो सामाजिक एवं धार्मिक रूढ़ियाँ, वर्जनाएँ समाज में प्रचलित हैं, वे स्त्रियों की संवेदना और सहज मानवोचित भावनाओं का दमन करती हैं और इन्हीं के बीच से मैत्रेयी ने अपनी माँ को गुजरते देखा और स्वयं भी भुक्तभोगी रहीं। उनकी विद्रोही चेतना, खास तौर से यौनिकता को लेकर जिस प्रकार के विद्रोही तेवर उनके कथा साहित्य में दिखलाई देते हैं वे उनकी वैचारिकता से उत्पन्न हुए हैं और इस वैचारिकता की जड़े उस सामाजिक व्यवस्था में हैं जो स्त्री के लिए दमनकारी हैं। एक स्त्रीवादी कथाकार के रूप में उनकी यही विशिष्टता है जो अन्य स्त्री–दृष्टि–सम्पन्न लेखिकाओं उन्हें अलग पहचान देती है।

संदर्भ सूची

1. तिवारी, मुक्तेश्वरनाथ (संपा०). *विश्वभारती पत्रिका,* पश्चिम बंगालः शांति निकेतन, अक्टूबर 2022–मार्च 2023, पृ. 129।
2. पवार, संतोष (2012) *मैत्रेयी पुष्पा के उपन्यासों में नारी,* विद्या प्रकाशन, कानपुर, पृ. 11।
3. पुष्पा, मैत्रेयी (2009) *कस्तूरी कुण्डल बसै* राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, पृ. 53।
4. बिसेन, जोगेंद्र सिंह (2015) *मैत्रेयी पुष्पा की कहानियों का कथ्य और शिल्प,* दिव्य डिस्ट्रीब्यूटर्स, कानपुर, पृ. 13।
5. www.ApriMati.com, 6 Aug.2016, Assess on 09-03-2024
6. पुष्पा, मैत्रेयी (2012) *गुड़िया भीतर गुड़िया (निवेदन),* राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, पृ. 08।
7. www.ApriMati.com, 6 Aug.2016, Assess on 09-03-2024
8. पुष्पा, मैत्रेयी (2012) *गुड़िया भीतर गुड़िया (निवेदन),* राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, पृ. 15।

****